कथा-कहानी मंच

उसका वजूद

मार्टिन जॉन

जन्म: 29 अक्तूबर 1954

शिक्षा: स्नातक

पुरस्कार:

सारिका, कथादेश और हंस जैसे स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में कथा-कहानी के लिए पुरस्कृत।

कृतियां: :

दो लघु कथा संग्रह, दो कहानी संग्रह और एक कविता संग्रह

संपर्क : भोजूडीह, जिला बोकारो, झारखंड

फोन : 9800940477

ईमेल : martin29john@gmail.com

'दीनू नहीं रहा!' मां-बाप के जमाने से पुश्तैनी घर में काम करने वाली शांति मासी ने खबर दी।

दीनू!... दीनानाथ हांड़ी !... उसका क्लास-मेट। ...वह एक बारगी तीन दशक पीछे चला गया...

...जैसे ही सिनेमा हॉल के बाहर लगे 'हाउसफुल' के बोर्ड पर नजरें पड़ीं, सबके चेहरे बुझ गए। बुझे मन से सब वापस कार में जा बैठे। किशन कुमार अभी कार स्टार्ट करने ही वाला था कि कोई खिड़की के पास आकर फुसफुसाया, सा'ब ..कहे को वापिस होना। अपने पास आठ टिकट हैं, दस का पंद्रह में दूंगा... बाल्कोनी का है। ले लो सा'ब!'

किशन कुमार सिर घुमाकर अभी कुछ कहता कि सामने वाला ब्लैकिया आश्चर्य मिश्रित खुशी से चिल्ला पड़ा– ''अरे...तुम किसना... है न? पहिचाना? मैं दीनानाथ। तेरा दीनू हूँ, बचपन का...''

''शटअप! तमीज से बात करो। मैं किसी दीनू-वीनू को नहीं जानता।'' और गाड़ी झटके से स्टार्ट हो गई। वह हक्का-बक्का वहीं खड़े-खड़े पेट्रोल और धूल की दुर्गंध फेफड़े में निगलता रहा–''स्साला अब काहे को पहिचानेगा। ...बड़का आदमी जो बन गया है।''

सारी रात किशन कुमार सोने के प्रयास में करवटें बदलता रहा। जैसे ही आँखें बंद करता, दीनू का चेहरा सामने आ जाता, जिसे आज उसने अपने बीवी-बच्चों के सामने पहचानने से एकदम इंकार कर दिया था। वह फिर कई साल पीछे लौट गया...

...कस्बे का सरकारी स्कूल। पहली से सातवीं कक्षा तक दीनानाथ हांड़ी उसके साथ था। किशन कुमार शुक्ल के पिता नगरपालिका के एक किरानी और दीनू के माता-पिता उसी नगरपालिका के स्वीपर थे। जात-पांत और सामाजिक स्तर कभी उनकी मित्रता में दीवार नहीं बन पाए थे। क्या घर, क्या बाहर, क्या स्कूल सब जगह दोनों गलबहियां डाले बेपरवाह घूमा करते थे। दीनू का परिवार आर्थिक दृष्टि से संपन्न था। मां-बाप दोनों कमाने वाले। खाने वाला केवल एक बेटा। उसकी जेब में हमेशा पांच-दस के नोट फड़फड़ाते रहते। चाट, छोले, बादाम, सिनेमा आदि का खर्च दीनू की जेब के जिम्मे रहता था।

किशन को अपनी जेब के कोने में

एक दो रुपये के सिक्के ही दुबके मिलते थे। दीनू द्वारा लाए गए हलवा, मिठाईयां, केक आदि पर किशना भी हक जमाता था। टिफिन के वक्त स्कूल के किसी खाली कमरे में बैठकर खुद कम खाना और किसना को जी भर खिलाना दीनू की एक आदत-सी बन गयी थी।

उस समय एक-दो रुपये के सिक्के किसना लिए बहुत बड़ी धन राशि हुआ करती थी। सरकारी स्कूल में पढ़ने वाले उसके पांच भाई-बहनों को एक-दो रुपये के ही सिक्के मिला करते थे। अगर किसी माह उसके पापा को तनख्वाह नहीं मिलता तो उन्हें ये सिक्के भी नसीब नहीं होते। उस महीने पापा को परिवार के सात प्राणियों के लिए राशन-पानी का इंतजाम करना बेहद मुश्किल हो जाता। इस बीच परिवार का कोई सदस्य शारीरिक रूप से अस्वस्थ हो गया तो उसके इलाज के मद में खर्च होने वाले पैसों का बंदोबस्त करना पापा के लिए टेढ़ी खीर बन जाती थी। मेडिकल स्टोर के उधार खाते में नाम दर्ज करवाने के अलावा कोई उपाय नहीं रहता था।

टिफिन के वक्त वह झिझकते हुए अक्सर जेब में दुबके पड़े दो रुपये का सिक्का निकाल कर दीनू को थमाना चाहता। दीनू के खर्च में शामिल होने की उसकी भी इच्छा होती। लेकिन दीनू उसके कंधों पर हाथ रखकर विनम्रता से मना कर देता, इन्हें जमा करके रख। कभी अगर कड़की आ गई तो मैं तुम्हें बोलूंगा।' लेकिन कड़की उसके पास कभी फटकी ही नहीं।

किशन कुमार को मिलने वाले एक-दो रुपये के सिक्के जब बीस-पचास के नोट में बदलने लगते तो कोई-न-कोई आफत उस पर आन पड़ती। कभी पेंसिल खो जाती, कभी कलम तो कभी ज्योमिट्री बॉक्स, उन्हें दुबारा खरीदने के लिए पापा से पैसे मांगने का मतलब एक और बड़ी 'आफत' को निमंत्रण देना। ऐसे मामलो में पापा का रौद्र रूप की कल्पना कर ही कांप जाता। एक-बार जब उसकी जेब के सिक्के दस-दसके पांच नोट के रूप में उछल-कूद मचाने लगे तो उसने दीनू से जोर देकर कहा-''अगले सप्ताह की टिफिन का सारा खर्च मेरा रहेगा।'' परंतु अफसोस, यह हो नहीं सका। उस दिन स्कूल से लौटते वक्त गली में फुटबॉल खेलते हम उम्र बच्चों को देखने के लिए रुका था। अचानक एक बच्चे की किक से बॉल उसकी तरफ आ गया। बॉल को वापस बच्चों के पास भेजने के लिए उसने भी एक जोरदार किक मारी। फिर क्या था, बॉल के साथ उसके जूते की तला भी हवा में लहराने लगा। यह एक नई आफत थी। बड़े प्यार से सहेजे गए दस-दस के पांच नोट में से चार नोट छिटककर रवि काका के पास चले गए। जूते की नई तल्ली खरीदने और मरम्मती में पूरे चालीस रुपये खर्च हो गए।

पता नहीं फिर क्या हुआ कि अचानक दीनू का स्कूल आना बंद हो गया। दीनू का पता लगाने के लिए वह उस कॉलोनी में गया जहां दीनू रहता था । उसके पड़ोसियों ने उसे इस खबर से वाकिफ कराया कि किन्हीं पारिवारिक कारणों से उसके माता-पिता ने नौकरी छोड़ दी है और खड़गपुर की किसी बस्ती में जा बसे हैं, वहीं दीनू का ननिहाल भी था।

इस बीच किशन कुमार की पढ़ाई उसी सरकारी स्कूल में ही जारी रही। चुंकि वह अपने भाई-बहनों की तुलना में सबसे ज्यादा कुशाग्र बुद्धि पायी थी, इसलिए पढ़ाई-लिखाई के मामले में उसने कोई शिकायत का मौका नहीं दिया। माता-पिता पूर्ण संतुष्ट थे। कक्षा में अव्वल रहने का सिलसिला दसवीं तक जारी रहा। आगे की पढ़ाई के लिए उसे निकटवर्ती शहर दुर्गापुर भेज दिया गया। वहीं उसने स्नातक की डिग्री हासिल की। खुशकिस्मती से रोजगार की तलाश की शुरुआती कोशिश में ही उसे कामयाबी मिल गई। इंडियन रेलवे सर्विस में उसका चयन हो गया। द्वितीय श्रेणी के अधिकारी की तीन वर्षीय ट्रेनिंग के बाद दक्षिण पूर्व रेलवे के खड़गपुर डिविजन में वाणिज्य प्रबंधक के रूप में उसकी पोस्टिंग हो गई।

आज एक मुद्दत के बाद दीनू मिला भी तो उसके सामाजिक स्तर ने उसे पहचानने से इंकार कर दिया। गाली भी दे डाली। दीनू के प्रति उसकी बद-सलूकी ने उसे बेहद उद्विग्न कर डाला। लगा कि उसके स्तर ने उसे मिली ऊंची तालीम का मजाक उड़ाया है। ऊंची तालीम ने तो यह नहीं सिखाया कि ऊंचाइयों पर पहुंचकर अपनी जमीन को भूल जाओ। वह जमीन को भूल गया और इस धारणा को और भी पुख्ता कर डाला कि मित्रता समान स्तर के ही बीच होती है। ...नहीं वह इस धारणा को तोड़ेगा। दीनू को शिद्दत से एहसास दिलाएगा कि वह उसे भूला नहीं है। बचपन में उसके संग गुजारे एक-एक पल अभी भी

उसके जेहन में बदस्तूर जिंदा है। वह एहसान फरामोश नहीं है। उसके हर एक एहसान को वह अपने सीने में संजोये रखा है।

उसकी उद्विग्नता में थोड़ी-सी नरमी आई इस फैसले से। उसने निश्चय कर लिया कि वह दीनू से मिलेगा, जरूर मिलेगा, एक अफसर की तरह नहीं बल्कि किसना की तरह। बचपन के दोस्त की तरह। उससे माफी मांगेगा उस बदसलूकी के लिए। वह जानता है, दीनू का दिल बहुत बड़ा है। उसकी गुस्ताखी को वह नजर-अंदाज कर देगा, जैसे बचपन में उसकी कई गुस्ताखियों को हंस कर माफ कर देता था। उसे पूरी उम्मीद है अपने सामने उसे देखते ही मोम की मानिद पिघल जाएगा। उसे गले लगाएगा। बचपन की दोस्ती फिर से जिंदा करेगा।

दूसरे दिन वह अपनी गाड़ी लेकर सिनेमा हॉल पहुंचा। इधर-उधर नजरें दौडायीं। दीनू कहीं नजर नहीं आया। एक ब्लैकिये से पता पूछा। पता मिल गया, और वह जा पहुंचा उस बस्ती में जहां दीनू रहता था। बस्ती में चमचमाती गाड़ी घुसते ही हलचल मच गई। बस्ती के लोग अपने-अपने झोंपड़ीनुमा घरों से बाहर निकल आएं। कई तरह के सवाल, जिज्ञासाएं, आशंकाएं छिपकली कीकटी दुम की तरह इधर-उधर छटपटाने लगे। आनन-फानन में चर्चाओं का बाजार गर्म हो गया। जैसे ही वह कार से उतरा हरिया भौचक्क रह गया, 'अरे ये तो हमरे डिपार्ट के बड़े साहब हैं।'

'...लेकिन हमारी बस्ती में इनका का काम?' हरिया रेल का सफाईकर्मी था। इस नाते जब-तब बड़े साहब से उसका वास्ता पड़ता रहता था। तत्काल हरिया बड़े साहब के पास पहुंच कर सलाम ठोंका– ''सर मैं हरिया! स्टेशन का सफाईवाला। आप यहां?'' किशन कुमार उसे न पहचानते हुए भी पहचानने का नाटक किया–''अरे हां! हरिया ये बताओ दीनू हांड़ी यहां कहां रहता है। मुझे उससे मिलना है।''

''सर, उसी का द्वार पर तो आप खड़े है।''

किशन कुमार की गाड़ी के आस-पास बस्ती के बाशिंदों की तादात धीरे-धीरे बढ़ गई थी। हल्की-दबी फुसफुसाहटें माहौल को रहस्मयी बना रही थी। दीनू घर के ही अंदर था। हल्का-दबा शोर जब उसके कानों में पड़ा तो मामले को जानने के लिए दरवाजा खोलकर बाहर आ गया। दीनू को देखते ही किशन कुमार उसके सामने जा खड़ा हुआ। बांहें फैलाकर भीतर के उफान को तोड़ा–''दीनू मेरे दीनू... मैं किसना ही हूं। तेरे बचपन का यार...'

दीनू अपने सामने बचपन के यार को देखकर एकबारगी अचकचा गया। उसके लिए यह अप्रत्याशित था। उसे इसकी कतई उम्मीद नहीं थी कि किसना उससे मिलने उसकी बस्ती पहुंच जाएगा।

''अरे यार ऐसे भकुआ कर देखता क्या है? आ जा, गले लग जा। देख, तुझसे मिलने मैं खुद पहुंच गया।''

दीनू के भीतर का बांध टूटने वाला था। अपने यार की मौजूदगी की तपिश से यादों के बर्फ कई-कई टुकड़ों में बंटकर पिघलने वाला था। उसकी धडकनें बेकाबू हो रही थीं। सांसें भी तेज होकर उसके नियंत्रण से बाहर हो रही थी। उसका जी चाहा कि बाहों में जकड़ ले अपने किसना को। वह आगे बढ़ने ही वाला था। आगे बढ़कर अपने यार को सीने से भींचने ही वाला था। उसके कदम बढ़ते कि भीतर से किसी ने बुरी तरह झिंझोड़ा। झिंझोड़ कर उसकी नजरों के करीब सिनेमा हॉल में लगे होर्डिंग की तरह उसे बेइज्जत किया जाने वाला मंजर ला खड़ा कर दिया। उसे पहचानने से इंकार कर दिया जाने वाला दृश्य उसके सीने में कांटों की तरह चुभने लगे। जज्बात की उफनती नदी में किसी ने एक बड़ा-सा पत्थर फेंका–''खबरदार, आगे मत बढ़! तेरा भी अपना एक वजूद है।'' उसने स्वयं को संयत किया। बढ़ते कदम रुक गए। चेहरे को भावहीन बनाकर कहा–''नहीं! सा'ब हम दीनू नहीं, आप गलत ठिकाने पर आ गए हैं।'' और वह झटके से झोंपड़ी में समा गया।

किशन को लगा, बचपन के यार ने ऊंचाईयां छूते उसके वजूद और उसे मिली ऊंची तालीम के दमकते मुखड़े पर ढेर सारा थूक उगल दिया।''❑

शेष पृष्ठ 43

इन्हीं चार धातुओं में
पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु में।

कोई बात नहीं मत लो
बाबा साहेब का नाम
और उनका ही नाम लो
जिससे तुम स्वर्ग जाओ
लेकिन सुन लो कान खोलकर
देश संविधान से ही चलेगा।❑